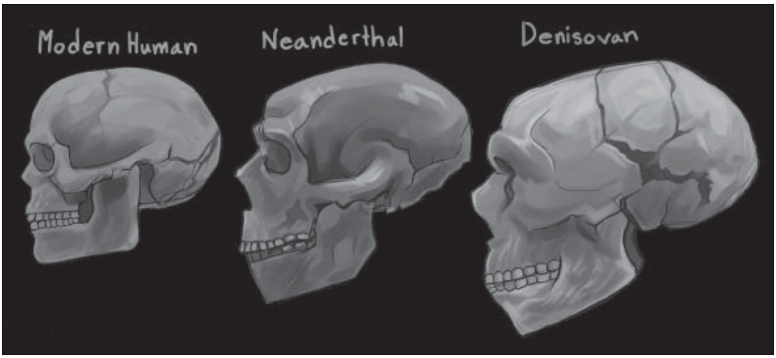
मनुष्य की उत्पत्ति

सत्यजित रथ

यह सार्वजनिक व्याख्यान *एकलव्य* द्वारा भोपाल में जुलाई 2019 में आयोजित तीन-दिवसीय कार्यशाला के दौरान दिया गया था।



चित्र: ट्रॅाय लॉरेंस

विज्ञान और समाज के सम्बन्धों में एक जटिलता है। चालीस-एक साल पहले, जब हम-जैसे लोग इस मामले में पड़े थे और विज्ञान के आन्दोलनों के साथ जुड़ते थे, तब हमें लगता था कि विज्ञान और समाज का जो रिश्ता है, वह आगे अधिकाधिक सरल, स्पष्ट और विकसित होता जाएगा। लेकिन हालात कुछ और ही हैं। हालात ऐसे हैं कि किस हद तक वैज्ञानिक सोच को, वैज्ञानिक विचार को और वैज्ञानिकता को समाज अपनाता है, इसे अपने लिए, अपने विकास के लिए इस्तेमाल करता है, यह देखकर हम-जैसे पुराने लोगों को कभी-कभार निराशा-सी लगती है। तो यह सच हो-न-हो, पर इन हालातों में सोचने लायक बात यह है कि यदि विज्ञान और समाज को लेकर आम लोगों के सामने कुछ बातें रखें, तो किस तरीके की रखें और कैसे रखें।

समाज को एक बात की अधिकाधिक चिन्ता पिछली सदी में ज़्यादातर बढ़ती दिखाई दी और वह यह चिन्ता है कि हम कौन हैं। हमारी अस्मिता क्या है? हमारी पहचान क्या है? और 'हम' और 'दूसरे', इनमें किस तरीके का फर्क है? किस तरीके का फर्क हम कर सकते हैं ताकि हमारी अपनी एक बिलकुल अलग-सी पहचान बने?

मनुष्य प्रजाति मतलब क्या?

फिर याद आता है कि एक ज़माने में प्रजातियों की बात हुआ करती थी, मनुष्य जातियों की बात हुआ करती थी। यह कहा जाता था कि एक वाइट रेस है, एक ब्राउन रेस है, एक ब्लैक रेस है, एक येलो रेस है। और उसमें हम ऊँच-नीच का भेद कर सकते हैं। उसमें श्रेष्ठता-कनिष्ठता को देख सकते हैं।

अब इस तरीके से जब प्रजाति के बारे में सोचते हैं, तो ज़ाहिर है कि जीव-विज्ञान के दृष्टिकोण से प्रजाति की एक समझ है। जाति-प्रजाति मतलब क्या? जिसे जीव विज्ञान में स्पीशीज़ कहते हैं, वो कोई एक ऐसी चीज़ है जिसकी एक वैज्ञानिक पहचान है। इस वैज्ञानिक पहचान का और हम जो मनुष्य की अलग-अलग जातियों की बात करते आए हैं, उसका क्या नाता-रिश्ता है? इसे कैसे समझें?

जीव विज्ञान के दृष्टिकोण से हम यह समझते हैं कि अगर दो जीव एक ही प्रजाति के हैं, तो उनके संयोग से नई सन्तति निर्मित हो सकती है, जो अपने स्तर पर और नई सन्तति को जन्म दे सकती है। अँग्रेज़ी में कहें तो, ‘Two individuals can give rise to a new generation that itself is fertile.’ तो कहा जाता था कि इस दृष्टिकोण से सब मनुष्यों की प्रजाति एक है, क्योंकि ज़ाहिर है कि गोरे हों, काले हों, पीले हों, नीले हों, जो कुछ भी हों, सबके एक-दूसरे के साथ बच्चे पैदा होते हैं। फिर किसी ने कहा कि ‘अरे भैया, ये तो ठीक है लेकिन घोड़ों और गधों के बीच में भी ऐसा संयोग हो सकता है, इसका मतलब यह नहीं है कि वे दोनों एक ही प्रजाति हैं।’ तो इतनी व्याख्या से मनुष्य जाति की एकता और अनेकता के बारे में कुछ कहा नहीं जा सकता। फिर कैसे कहा जा सकता है? तो पुरातत्व विज्ञान (आर्कियोलॉजी) में एक दूसरा नज़रिया सामने आया। वह यह था कि हमारे पहले, मनुष्य जाति के पहले, कई हज़ार लाख वर्षों तक, मनुष्य जैसी प्रजातियाँ पृथ्वी पर मौजूद थीं। अब यह मनुष्य ही थे या मनुष्य जैसी अन्य प्रजातियाँ थीं? जब आर्कियोलॉजी या पेलेओंटोलॉजी (जीवाश्म विज्ञान) के दृष्टिकोण से देखा जाए तो उसमें परेशानी यह है कि हमें जब अवशेष मिलते हैं, तो उनमें से दो जीवों का संयोग होकर सन्तति निर्माण हो सकता है या नहीं, इस प्रश्न का उत्तर तो मिल ही नहीं सकता।

जीवाश्म शास्त्र तथा पुरातत्व शास्त्र के अनुसार, हमने मनुष्य जैसी प्रजातियों (ह्यूमनॉइड स्पीशीज़) का एक विस्तृत खाका बनाया था कि 10 लाख वर्ष पहले, इस तरीके की प्रजातियाँ पृथ्वी पर दिखाई देती हैं, जो इतने लाख साल बाद विलुप्त हो जाती हैं। उनकी जगह अन्य प्रजातियाँ

दिखाई देती हैं, और उनकी जगह फिर अन्य प्रजातियाँ दिखाई देती हैं। इन सब में आम तौर से हड्डियों और दाँतों के सबूतों पर प्रजाति निर्धारण किया जाता है। इस वजह से हम इतना जान गए थे कि कई लाख साल पहले, पूरे भूतल पर जहाँ भी देखो, मनुष्य जैसी प्रजातियों के अवशेष मिलते हैं।

मनुष्य प्रजाति का उद्‌गम

अब हम यह मानकर चले हैं कि वे हमारे प्रजाति-पूर्वज हैं, सिर्फ पूर्वज नहीं, प्रजाति-पूर्वज। हमारी प्रजाति उन प्रजातियों से आई हुई है, यह हम मानकर चले हैं। लेकिन अगर ऐसा है, तो एक सवाल पैदा होता है कि पूर्व मनुष्य प्रजातियाँ (या मनुष्य जैसी प्रजातियाँ), पृथ्वी तल पर हर जगह जिनके अवशेष मिलते हैं, क्या उनसे मनुष्य प्रजाति का उद्‌गम पृथ्वी पर दस-पाँच अलग-अलग जगहों पर हुआ? अगर ऐसा है तो हम सचमुच अलग-अलग हैं। इसे मानवता का बहू-उद्‌गमी विकास कहते हैं (multicentric generation of humanity)।

मसले को सुलझाएँ कैसे? क्या सचमुच यह हुआ था? क्या हमारा प्रागैतिहास इस तरीके से बना है? कई सालों तक इस प्रश्न का सुस्पष्ट उत्तर हमारे पास नहीं था, बिलकुल ही नहीं था। इस मसले में ऊँच-नीच का एक मुद्दा आता है, कि 'हम यहाँ पहले से हैं, यह भूमि हमारी है'। क्यों हमारी है? क्योंकि हम यहाँ पर मनुष्य योनि में आकर पहुँचे हैं, बाहर से जो लोग आए हैं वे 'दूसरे' हैं, 'फॉरेनर' हैं, उनका यहाँ पर कोई काम नहीं है। अगर आएँ तो हमसे नीच बनकर, हमसे कनिष्ठ बनकर रहें। इस जैसे दृष्टिकोण के और भी कई आधार हैं लेकिन प्रमुख रूप से एक आधार यह है कि मनुष्य प्रजाति का निर्माण अलग-अलग जगहों में, अलग-अलग दिशा में हुआ।

पचास-एक साल पहले से यह साबित होने लगा कि इस प्रश्न से भिड़ने के लिए हमारे पास एक और रास्ता है। प्रश्न केवल अनुमान का नहीं है, प्रश्न यह है कि अनुमान सही है या गलत, यह कैसे परखें। तो अनुमान परखने के लिए कई अलग-अलग मार्ग अपनाए जा सकते हैं। पचास-एक साल पहले इसी तरीके का एक धुँधला-धुँधला-सा रास्ता हम देखने लगे, वह है जेनेटिक्स का रास्ता।

मैं सिर्फ यह नहीं कहना चाहता कि आज का जनन विज्ञान (जेनेटिक्स साइंस) मनुष्य जाति के उद्‌गम के बारे में क्या कहता है। मैं यह भी कहना चाहता हूँ कि वह जो कुछ कहता है, कैसे कहता है और किस आधार पर कहता है। क्योंकि अगर हम सार्वजनिक चर्चा में सिर्फ फल की बात करें और प्रक्रिया की बात न करें, जिससे हम उस फल तक पहुँचे हैं, तो हम वैज्ञानिक समाज नहीं हैं।

तो जेनेटिक्स साइंस, यानी जनन विज्ञान, हमारी प्रजाति उद्‌गम के प्रश्न के उत्तर को ढूँढ़ने में मदद कैसे कर रहा है? जब हम प्रजनन की बात सोचते हैं – मनुष्यों को बच्चे होते हैं और ये बच्चे भी मनुष्य होते हैं। भ्रूण स्त्री-बीज और पुरुष-बीज के संयोग से, एक कोशिका से बनता है, तो इसका मतलब यह है कि भ्रूण में कोई प्रोग्राम है। और इस प्रोग्राम के ज़रिए उस कोशिका का विभाजन होता है, फिर और विभाजन होते-होते विभाजित कोशिकाओं में ऐसे परिवर्तन होने लगते हैं कि हाथ बनते हैं, पैर बनते हैं, मस्तिष्क बनता है, फेफड़े बनते हैं वगैरह-वगैरह। और ये सब मनुष्य संरचना में ढलते जाते हैं। तो यह प्रोग्राम माँ-बाप से बच्चे तक पहुँचा, पर कैसे? माँ से एक कोशिका आई और पिता से एक कोशिका आई। उन दो कोशिकाओं का संयोग होकर एक कोशिका बनी। तो उन दो कोशिकाओं ने, ज़ाहिर है, प्रोग्राम को एक-एक हिस्सा दे दिया। देखें तो यह भी सच है कि बच्चे माँ-बाप जैसे थोड़े-बहुत दिखते हैं। इसका मतलब यह हुआ कि इस माँ-बाप में और उस माँ-बाप में जो थोड़े-थोड़े फर्क हैं, उनमें से कई फर्क अनुवांशिक हैं, मतलब कि वे फर्क जो बच्चे को मिल सकते हैं।

नकल और फर्क

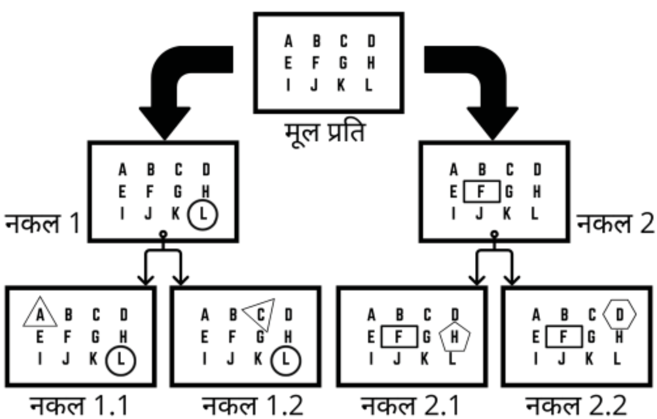
हर माँ-बाप बच्चे को जो प्रोग्राम देते हैं, जो एक संरचना देते हैं, वह थोड़ी-सी अलग है। अगर माँ-बाप से बच्चे को समझना है, तो उसके बारे में थोड़ा और सोचते हैं। एक ज़माना था जब *एकलव्य* जैसे संगठनों में किताबें बहुमूल्य मानी जाती थीं, क्योंकि आसानी-से मिलती नहीं थी। एक किताब 10 लोगों के काम आनी है, तो एक किताब की बहुतेरी किताबें बनानी है, कैसे बनाएँ? तो फोटो-कॉपियर का प्रयोग हुआ करता था। उसके पहले क्या हुआ करता था? दादी-नानी की पोथी होती थी। रामचरितमानस की भोजपत्र पर हाथ-लिखी पोथी होती थी। लेकिन उसकी भी और प्रतियाँ कैसे बनती थीं? कोई पढ़कर लिखता था। पर क्या बिलकुल सही लिखता था? नहीं तो। उदाहरण के लिए 'ज्ञानेश्वरी' की पहली प्रति सच्चिदानन्द बाबा ने लिखी। अगर किसी को नकल चाहिए तो मान लीजिए कि दो लोगों ने पहली प्रति की नकल की। दोनों नकलों की अगर एक-दूसरे से तुलना करेंगे तो क्या बिलकुल वैसी-की-वैसी निकलेंगी? ना! इन्सान नकल कर रहा है, कहीं-न-कहीं तो फर्क पड़ना है। मैं 'भूल' भी नहीं कहूँगा, नकल में 'बदलाव' तो होना ही है। अच्छा, अब इन दो नकलों में से एक नकल लेकर कोई इधर गया, दूसरी नकल लेकर कोई दूसरे गाँव गया। वहाँ पर नकलों से नई नकलें होनी हैं, यानी कि कॉपियों से कॉपियाँ बननी हैं। तो ये

प्रतियाँ मूल प्रति से पहले ही अलग हो चुकी हैं, और जब उनसे और प्रतियाँ बनेंगी तो उनमें और बदलाव या फर्क आएँगे।

अगर आज के वक्त, ज्ञानेश्वरी की, रामचरितमानस की, या किसी अन्य पुरानी पुस्तक की 50 अलग-अलग कॉपियाँ इकट्ठी करें तो उन कॉपियों में भेद, अलगाव आप देख सकते हैं। कॉपियों की तुलना करने के काम को पाठ्य-भेद बताना कहते हैं।

तो मान लीजिए, एक मूल प्रति (चित्र-1) की दो नकलें की जाती हैं – नकल 1 और नकल 2. इन नकलों में मूल कॉपी के मुकाबले बदलाव या फर्क आ जाते हैं। नकल 1 में यह बदलाव 'L' में और नकल 2 में यह फर्क 'F' में आता है। अब इन कॉपियों से दो-दो और कॉपियाँ बनाई जाएँ (नकल 1.1, 1.2 और 2.1, 2.2) तो उनमें 'L' और 'F' के फर्क तो शायद जैसे-के-तैसे रहें, पर सम्भवतः और कहीं नए फर्क निर्माण हो गए हों (जैसे A, C, H, D)।

अब इन चारों नकलों (नकल 1.1, 1.2, 2.1, 2.2) के पाठ-भेदों की समझ तो बन गई, पर इन चारों में आपसी रिश्ता क्या है? तो हम यह कहते हैं कि नकल 1.1 और 1.2 आपस में ज़्यादा जुड़े हुए हैं और नकल 2.1 और 2.2 आपस में ज़्यादा जुड़े हुए हैं, और इन दोनों समूहों में फर्क है। ऐसा क्यों कह रहे हैं हम? इसलिए कि 'F' का फर्क हम 2.1 और 2.2 में पाते हैं पर 1.1 और 1.2 में नहीं पाते। ऐसे ही 'L' का फर्क 1.1 और 1.2 में पाते हैं पर 2.1 और 2.2 में नहीं पाते। लेकिन फर्क 'A', 'C', 'H' और 'D' सिर्फ एक-एक कॉपी में है। इसका मतलब है कि वे फर्क जो सबसे कम कॉपियों में हों, वे फर्क अभी-अभी निर्माण हुए



चित्र-1

हैं। पिछली कॉपी की प्रक्रिया में निर्मित हुए हैं। और जो फर्क कई प्रतियों में मिलने लगें, वे बहुत पहले निर्मित हुए हैं।

यदि मैं मौजूदा नकलें पढ़ूँ, तो फर्कों का वर्गीकरण कर सकता हूँ। तब यह कहा जा सकता है कि कुछ ऐसे फर्क हैं जो पूरी कॉपियों के समूह को दो गुटों में बाँटते हैं। फिर ऐसे फर्क हैं जो कई कॉपियों को 8-10 गुटों में बाँटते हैं। तो ज़ाहिर है कि जो फर्क सिर्फ दो गुटों में बाँटते हैं, वे बहुत पुराने फर्क हैं, और जो फर्क और ज़्यादा गुटों में बँटवारा करते हैं, वे और आधुनिक फर्क हैं। तो फर्क पढ़ने से मुझे समय का अन्दाज़ा लगने लगता है।

अच्छा, ये फर्क जब पड़ते हैं तो प्रजनन के दौरान पड़ते हैं। हम जानते हैं कि यदि मनुष्य शरीर के प्रोग्राम की, प्रजनन के दौरान कॉपी बनाएँ तो फर्क पड़ता है। यानी हर फर्क निर्मिती का समय हमें मालूम है, लेकिन कैसे? क्योंकि मनुष्यों को प्रजनन करने योग्य बनने के लिए कितने साल लगते हैं, यह हम जानते हैं – 15-20 साल तो लगते हैं, तभी जाकर प्रजनन होता है। इसका मतलब हुआ कि हमारी कॉपियों में जो फर्क आए हैं, वे पीढ़ी-दर-पीढ़ी पड़ते आए हैं और पीढ़ी तकरीबन कितने सालों की है, हम जानते हैं।

यदि रामचरितमानस की हर 10 साल में नकलें बनाई गईं तो बताया जा सकता है कि पहली नकल कितने सौ साल पहले बनाई गई थी। सिर्फ आज की सारी कॉपियाँ पढ़कर, उनका विश्लेषण करके हम इस नतीजे पर पहुँच सकते हैं कि कितने सौ साल पहले, रामचरितमानस की पहली नकल बनी। बिलकुल ऐसे ही, आपका-हमारा जो प्रोग्राम है, जो हमारी हर कोशिका के डीएनए में लिखा गया है, वह प्रोग्राम अगर हम पूरा पढ़ पाएँ तो क्या उससे अन्दाज़ा बन सकता है कि हम में से कौन एक पूर्वज से हैं और हम में से कौन बिलकुल अलग-अलग पूर्वजों से हैं?

अगर हम यह कहें कि मेरा और आपका पूरा प्रोग्राम आप पढ़ो, तो यह उन नकलों को पढ़ने जैसा होगा। अगर चन्द लोगों के प्रोग्राम पढ़ने लगें, तो हम वर्गीकरण करने लगेंगे। और चूँकि हम पीढ़ी की अवधि जानते हैं तो हम कह सकते हैं कि आपके और हमारे प्रोग्राम में जो फर्क हैं, वे कब और कितने हज़ार वर्ष पहले निर्मित हुए। तो इसका मतलब यह हुआ कि इतने हज़ार वर्ष पहले हमारे पूर्वज एक थे।

अब यह जो प्रोग्राम है जिसमें हम फर्क ढूँढ़ रहे हैं, क्या हम इस पूरे प्रोग्राम को पढ़ सकते हैं? तो बीसवीं सदी में भी हम इसे पूरा नहीं पढ़ पा रहे हैं।

डीएनए अनुक्रम की समझ

तो एक डीएनए को लेकर उसकी

पूरी प्रणाली पढ़ें, उसका पूरा अनुक्रम पढ़ें, और चूँकि हमारे अनुक्रम में ये छोटे-छोटे फर्क आए हुए हैं तो अनुक्रम को एक-दूसरे से जोड़कर देखने पर सारे फर्क सामने आ जाएँगे। हज़ार लोगों के अनुक्रम देखने पर हम वर्गीकरण करने के काबिल हो जाएँगे। पिछले 20 सालों से यह काम लगातार चलता आया है, और इसके कई नतीजे बड़े रोचक और उद्‌बोधक हैं। विशेष तौर पर इस प्रश्न के उत्तर में कि मनुष्य जाति आई कहाँ से।

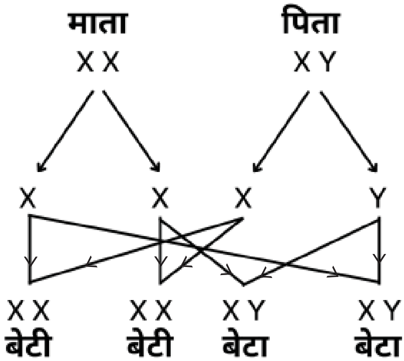
पर नतीजों से पहले, एक और बात पर ध्यान देना ज़रूरी है कि वैज्ञानिक हमें जो बताते हैं, वह क्यों कहते हैं, किस आधार पर कहते हैं, यह समझना उतना ही ज़रूरी है जितना 'क्या कहते हैं' समझना ज़रूरी है। मैंने आसानी-से कह दिया कि मेरा खून ले लो, उसमें डीएनए है, डीएनए का अनुक्रम तय करो। पर डीएनए का अनुक्रम भला कैसे तय किया जाता है? इसके लिए एक प्रतीकात्मक उदाहरण देता हूँ।

मैंने ज्ञानेश्वरी या रामचरितमानस की नकलों की बात की। यदि पूरी नकल है हाथ में, तो पढ़ते जाओ। एक पन्ना पढ़ो, फिर अगला, फिर अगला और फिर अगला पढ़ो। इस तरीके से डीएनए का अनुक्रम तय करने की प्रणाली आज भी हमारे पास नहीं है। तो फिर क्या है? हम डीएनए के अनुक्रम इस तरीके से तय करते हैं - एक दूसरे उदाहरण में, सन्त तुकाराम ने अपनी अभंगावली लिखी थी। लोगों ने बहुत कोसा, परेशान किया तो उन्होंने उद्विग्न होकर अभंग नदी में डुबा दिए। फिर भगवान ने किसी तरीके से अभंग बाहर निकालकर दोबारा हाथ में दे दिए। लेकिन है तो कागज़, डूब गया, और क्षण भर के लिए मान लीजिए कि सन्त महोदय ने बॉल पेन से लिखा था। कागज़ तो बिलकुल गल जाना चाहिए। फिर सारे कागज़ इकट्‌ठे किए पर उसमें से कुछ फटे, कुछ के चिथड़े हुए, कुछ के टुकड़े हुए और सारे बड़े भक्ति भाव से इकट्‌ठे करके सुखाए, अब अभंगावली पढ़कर दिखाइए।

डीएनए सीक्वेंसिंग (अनुक्रम तय करना) भी ऐसी अड़चनों के साथ होता है। तो कैसे करें? एक टुकड़ा पढ़ें, फिर दूसरा, तीसरा पढ़ें। कौन-सा टुकड़ा किस टुकड़े के साथ आगे या पीछे जाता है, कैसे तय करें? डीएनए अनुक्रम तय करने के लिए इसमें थोड़ी-सी सहूलियत मिलती है, वह क्या है? वह यह है कि हम जब खून लेते हैं और उसमें से डीएनए निकालते हैं तो एक कोशिका में से डीएनए नहीं निकलता, कई लाख कोशिकाओं में से डीएनए निकलता है। इसका मतलब है कि हमने अभंगावली की एक कॉपी नहीं डुबाई, एक लाख फोटोकॉपियाँ डुबाईं। क्योंकि हमारे खून में डीएनए के जो

अनुक्रम हैं, वे एक-दूसरे से तकरीबन मिलते-जुलते हैं। तो एक लाख फोटोकॉपियाँ हमने डुबाई हैं, उसके सारे चिथड़े निकाले हैं। अब होता है कि आप एक टुकड़ा पढ़ लो, फिर पूरे चिथड़ों में से उससे मिलने वाला दूसरा टुकड़ा ढूँढ़ो। वह बिलकुल उसी आकार का नहीं होगा। चिथड़े हैं, बिलकुल उसी आकार के थोड़े होने हैं। तो वह थोड़ा-सा मिलता होगा लेकिन उसका पहले का थोड़ा हिस्सा होगा, बाद का थोड़ा हिस्सा होगा, आप कहोगे, "अरे!" और इस तरीके से आप पूरी अभंगावली दोबारा पढ़ लोगे। इसके लिए जो संगणकीय विज्ञान लगता है, अगर वह न होता तो यह काम नहीं होता।

एक तो रसायन विज्ञान में जो प्रगति हुई है उसकी ज़रूरत थी, दूसरी संगणक विज्ञान (informatics) जिसे सूचना विज्ञान या सूचना प्रणाली विज्ञान भी कहते हैं, उसमें जो नए-नए शोध विचार हुए हैं, उनके आधार पर हम यहाँ तक पहुँचे हैं कि कुछ हद तक हम डीएनए के अनुक्रम पढ़ पाए हैं। क्या आज पूरा पढ़ पाते हैं? जवाब है, 'हाँ' लेकिन बड़ा महँगा पड़ता है पूरा पढ़ना। तकरीबन पढ़ना थोड़ा कम महँगा होता है। यह भी महत्वपूर्ण है क्योंकि पैसे का भी मसला है कि कितने पैसे जुटाओगे इस काम में। हमने आज तक जो सीखा है, वह तकरीबन पढ़कर सीखा है। यह याद रखना चाहिए क्योंकि



चित्र-2: माता-पिता से मिले क्रोमोसोम के आधार पर लिंग निर्धारण दर्शाता रेखाचित्र।

और बारीकी-से पढ़ें तो और नए मुद्दे सामने आ सकते हैं।

स्त्री पूर्वज और पुरुष पूर्वज

तो यह पढ़ने के बाद तीन मुद्दे आए सामने - पहला ठोस मुद्दा यह कि हम सबकी एक स्त्री पूर्वज है और एक पुरुष पूर्वज। अब स्त्री-पुरुष कैसे जानें? यह आसान है। पर आसान क्यों है? आसान इसलिए है कि सबको पता है कि पुरुष और स्त्री में क्रोमोसोम्स का फर्क होता है। स्त्री में दो X क्रोमोसोम होते हैं, पुरुषों में एक X क्रोमोसोम और एक Y क्रोमोसोम होता है। इसका मतलब Y क्रोमोसोम सिर्फ बाप से बेटे को जाता है। बाप से बेटी को नहीं जाता, माँ से बेटे को नहीं जाता, न माँ से बेटी को जाता है। सिर्फ बाप-बेटे का अनुवांशिक रिश्ता है, Y क्रोमोसोम। अगर हम Y

क्रोमोसोम का अनुक्रम तय कर पाएँ और उसके फर्क पढ़ पाएँ, तो इस सवाल का उत्तर मिल सकता है कि क्या हम सब पुरुषों का पुरुष पूर्वज एक है या अनेक हैं। और उसका उत्तर यह है कि 'एक है'।

अगला प्रश्न है – स्त्रियों के बारे में क्या? तो इसके लिए थोड़ी और वैज्ञानिक जानकारी ज़रूरी है। डीएनए कोशिका के केन्द्रक में है। पुरुष कोशिका का केन्द्रक स्त्री कोशिका में आकर संयोग करता है जिससे भ्रूण कोशिका का केन्द्रक बनता है। लेकिन इस केन्द्रक के बाहर कोशिका में, कोशिका के कई सारे पुर्ज़े हैं, और उनमें एक अलग-सा डीएनए है। ऐसा क्यों है, इसकी एक अलग ही कहानी है। असल में, वह इससे भी ज़्यादा रोचक कहानी है। खैर, तो केन्द्रक के बाहर का जो डीएनए है, 'एक्स्ट्रा न्यूक्लीयर डीएनए' वो भ्रूण में सिर्फ माँ की ओर से आता है, क्योंकि पुरुष कोशिका का एक्स्ट्रा न्यूक्लीयर डीएनए भ्रूण में आता ही नहीं है। यह आम तौर से माइटोकॉण्ड्रिया में होता है इसलिए इसे माइटोकॉण्ड्रियल डीएनए कहते हैं। लेकिन तत्व यह है कि हमारी हर कोशिका के केन्द्रक में, यानी कि न्यूक्लियस में डीएनए है, लेकिन केन्द्रक के बाहर भी डीएनए है। और हम चाहे पुरुष हों या स्त्री हों, हमारे केन्द्रक के बाहर का जो डीएनए है, वह माँ से आता है। तो इसका मतलब यह है कि हमारी माँ के पक्ष की वंशावली हम पढ़ सकते हैं, उस डीएनए का अनुक्रम पढ़कर। तो इससे ज़ाहिर होता है कि हम सबका एक पुरुष पूर्वज है और एक स्त्री पूर्वज।

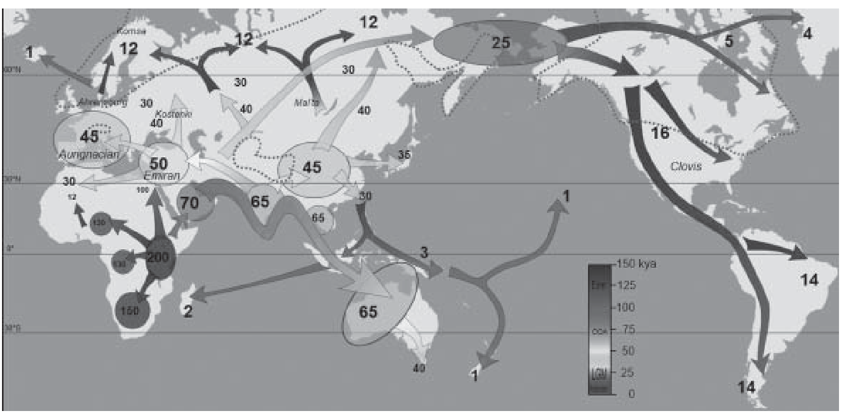
अफ्रीका से प्रवास

अच्छा ठीक है, पहले प्रश्न का उत्तर हमें मिल गया। वह प्रश्न क्या था? कि मनुष्य प्रजाति का उद्‌गम स्वतंत्र स्रोतों से दुनिया में अलग-अलग जगहों में हुआ है या नहीं? जवाब है, 'नहीं'। इस जवाब को चन्द मिनट बाद हम थोड़ा पलटने जा रहे हैं, लेकिन अभी के लिए समझिएगा कि जवाब आम तौर पर है – 'नहीं'। एक उद्‌गम है हमारा। लेकिन एक नदी के बारे में सिर्फ इतना कहकर समाधान नहीं होता कि एक उद्‌गम है। अरे भैया, एक उद्‌गम है, लेकिन कहाँ है? बड़ा अच्छा लगता अगर भरतखण्ड में होता, है न? तो कैसे मालूम करें? यह जो कॉपियों का वैविध्य है, इसे दुनिया के नक्शे पर लगाने लगें तो ज़ाहिर होने लगता है कि किसके, किसके साथ कितने करीबी रिश्ते हैं। और यह मालूम पड़ता है, जब इस तरीके से विश्लेषण किया जाता है, कि हम सबका मूल अफ्रीका में है। न यूरोप में, न न्यूयॉर्क, शिकागो, वाशिंगटन में, न चीन में और न ही भरतखण्ड की पुण्य भूमि में। अफ्रीका में है। और इस शोध के

ज़रिए एक बिलकुल नया और रोचक शोध हमारे सामने आ खड़ा होता है। एक बिलकुल नई सम्भावना हमारे सामने आकर खड़ी होती है। वह यह है कि अच्छा, हम सबके पूर्वज अफ्रीका में रहे? तो मनुष्य जाति अफ्रीका से कब निकली? कैसे निकली? किस दिशा में निकली? कितने साल बाद कहाँ पहुँची? कैसे समझें इसे? इस विश्लेषण को लेकर हम उस प्रवास के बारे में अनुमान लगा सकते हैं। ध्यान में रखिएगा कि ये अनुमान हैं। थोड़े-बहुत बदल भी सकते हैं, लेकिन फिर भी बड़े अद्‌भुत हैं।

इन अनुमानों से अभी तक तो हम यह समझते हैं कि तकरीबन एक लाख साल पहले... वैसे ये आँकड़े जो हैं, इनमें 20-30 फीसदी इधर-उधर हो सकता है... तो तकरीबन एक लाख साल पहले हम अफ्रीका से निकले। निकले का मतलब सिर्फ इतना है कि तकरीबन 80 हज़ार साल पहले अफ्रीका के बाहर पश्चिमी एशिया में, जिसे आज यूरोपीय, अमरीकी लोग मध्य-पूर्व कहते हैं - हमें नहीं कहना चाहिए क्योंकि हमारे लिए वह मध्यपूर्व नहीं है - पश्चिमी एशिया में पहुँचे। हम अफ्रीका में फैल रहे थे। ज़ाहिर है, फैलते-फैलते अफ्रीका खण्ड से बाहर, पश्चिमी एशिया तक हम आ पहुँचे। और पश्चिमी एशिया से हमने दो-तीन मार्ग लिए। धीरे-धीरे, धीरे-धीरे हमारा प्रसार अरबी सागर के किनारे-किनारे, पश्चिमी एशिया से ईरान तक, ईरान से दक्षिणी एशिया तक, मतलब यहाँ तक हुआ।

तकरीबन 60 हज़ार साल पहले की बात है। इतना समय लगता है



चित्र-3: मनुष्य प्रजाति का दुनियाभर में हुआ फैलाव दर्शाता चित्र (1 kya = 1000 वर्ष)

चित्र विकिपीडिया से साभार

क्योंकि कोई अश्वमेध यज्ञ करने के लिए नहीं निकला था... अरे भैया, गाँव था, चार लोग अपना उदर निर्वाह करते थे। बच्चे हुए, बच्चे दस मील दूर जाकर वहाँ बसे, फिर उनके बच्चे 10 मील दूर जाकर कहीं और बसे, यूँ हम प्रसारित होते गए। हमारा समाज फैलता गया। चढ़ाई नहीं की समाज ने, रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में हम फैले। तो यूँ फैलते-फैलते 60 हज़ार साल पहले हम इस भूखण्ड में, दक्षिण एशिया में, आकर पहुँचे। यहाँ नहीं रुके, लोग जो कुछ समझें तो समझें, यहाँ कोई बहुत खास बात नहीं है। हममें से कुछ आगे चलते गए। आगे चलते-चलते, किनारे-किनारे पूर्व एशिया में गए, चीन तक गए, ऊपर बिलकुल पूर्वी रशिया का आर्कटिक महासागर के पास जो हिस्सा है, वहाँ तक जाकर पहुँचे। हम जैसे-जैसे समुद्रों के किनारे पहुँचे, वैसे ही हम द्वीपों पर जाने लगे। इंडोनेशिया, फिलीपींस के द्वीपों तक हम फैलने लगे। यहाँ तक कि पापुआ न्यू गिनी तक जाकर हमने एक बड़ी छलांग मारी, 400 किलोमीटर की और ऑस्ट्रेलिया की भूमि पर पहुँचे। अब कोई कहता है 70 हज़ार, कोई 60 हज़ार या 50 हज़ार, पर वो कोई बड़ी बात नहीं है। वहाँ तक जा पहुँचे। लेकिन जहाँ-जहाँ पहुँचे, छोटी-छोटी तादाद में ही पहुँचे। ये कोई बड़े-बड़े शहर नहीं थे। बल्कि चन्द लोगों के छोटे-छोटे समूह थे।

...ये तो एक तरह से ऐसे जानवर थे जो अपना संरक्षण बहुत अच्छे तरीके से नहीं कर पाते थे। तो बच्चे जन्म लेते ही मर जाते, लोग मरते इस-उस कारण। इसलिए कई बार आए और विलुप्त हो गए। किसी जगह पर पहुँचे और फिर सारे मर गए। यह तो होता रहा होगा। तो ऐसा नहीं है कि हमने ऑस्ट्रेलिया तक जाने का एक रास्ता बना लिया और बस, यहाँ दक्षिण एशिया में सोचा कि ऑस्ट्रेलिया तक जाएँ, तो एक एयर इंडिया की फ्लाइट ली और चले गए। अलग-अलग गुट, अलग-अलग जगहों पर इस-न-उस तरीके से पहुँचे। बड़े आश्चर्य की बात यह है कि किसी-न-किसी तरीके से कोई-न-कोई समूह जो जा पहुँचा, वो आज तक ज़िन्दा रहा। उससे मनुष्यता के बारे में बहुत कुछ सीखने लायक मिला। तो पश्चिम एशिया से निकले, एक तो अरबी समुद्र के किनारे-किनारे आए, दूसरे ईरान से मध्य एशिया की ओर चले गए, तीसरे पश्चिम एशिया से आज के तुर्किस्तान होकर यूरोप की ओर चले गए।

कोई मिल गया!

अब जो लोग यूरोप या मध्य एशिया की ओर चले गए, उन्हें कुछ अजीबो-गरीब मिला। क्या मिला? यह मिला... अभी तक हम समझे हैं कि हम सब बड़े शुद्ध अफ्रीकी हैं। अभी तक जो कहानी बताई आपको, उससे

हम यह अनुमान लगा सकते हैं कि हम बड़े शुद्ध अफ्रीकी हैं। हमारी एक स्त्री पूर्वज थी, हमारा एक पुरुष पूर्वज था और हम सभी उनकी सन्तान हैं। हैं? ना! ना क्यों? ना इसलिए कि हम में से जो लोग यूरोप की ओर गए, उन्होंने देखा कि यहाँ तो पहले से दूसरे लोग हैं भैया! वह लोग कौन हैं, यह समझने के लिए हमें और पीछे वापस अफ्रीका में जाना पड़ेगा। साधारणत: यह लगता है, अनुमान स्वरूप, कि सारी मनुष्य जैसी प्रजातियों का मूल अफ्रीका में हुआ। और ये सारी मनुष्य-जैसी प्रजातियों, मनुष्य नहीं, मनुष्य-जैसी प्रजातियों का उद्‌गम अफ्रीका में पाया गया और फिर वे दुनिया भर में फैलती गईं। और यह सिलसिला पिछले एक लाख सालों से नहीं, 10-20 लाख सालों से चलता आया है। तो अफ्रीका से एक के बाद एक कई प्रजातियाँ रोज़मर्रा की ज़िन्दगी में बाहर आती गईं, फैलती गईं, विलुप्त भी होती गईं। हमसे दो लाख साल पहले, अफ्रीका से एक मनुष्य जैसी प्रजाति बाहर निकली। 40-50 हज़ार साल पहले, जब हम यूरोप में पहुँचे, तो उनके जो वंशज हैं, उनसे दोबारा मुलाकात हुई। आप समझ लीजिएगा कि हम में और उनमें दो-एक लाख साल की दरार है, और मेरे लिए अब भी अति आश्चर्य की बात यह है कि मिले तो मिले, बच्चे भी पैदा किए हमने। दो लाख साल की दरार लांघ कर हमने उनके साथ बच्चे पैदा किए। हम होमो-सेपियंस हैं और वह प्रजाति है, होमो-निएंडरथल्स। अब तक हम कहते आए हैं कि जब दो प्रजातियाँ अलग-अलग होती हैं तो उनमें संकरित सन्तति प्रजनन-योग्य नहीं होती।

डीएनए की शुद्धता?

यह जो सीक्वेंसिंग का, यानी कि अनुक्रम तय करने का मसला है, इसने हमारी पुरानी समझ को झूठ ठहराया। लेकिन अब एक छोटा तकनीकी सवाल पूछते हैं कि सीक्वेंसिंग में हमने यह कैसे जाना, कॉपियाँ पढ़ने में यह कैसे जाना कि निएंडरथल की कॉपियाँ इसमें घुसी हैं। यह जानने के लिए हमें निएंडरथल की कॉपी चाहिए। अगर वो पढ़ी होती, तब जाकर तुलना में हम यह कह सकते थे कि निएंडरथल के जो अनुक्रम हैं, वे हमारे अनुक्रम में भी मौजूद हैं। वे हमारी प्रणालियों में मौजूद हैं। तो इसके लिए अगर निएंडरथल डीएनए नहीं मिलता तो यह बात नज़रअन्दाज़ ही हो जाती, कभी सामने नहीं आती। निएंडरथल डीएनए कहाँ से मिला? अब यूरोप, रशिया वगैरह का फायदा यह है कि ये जगहें बड़ी ठण्डी हैं। तो फायदा यह है कि मृत अवशेषों में जो जैविक सामान है, डीएनए है, वह बिलकुल खराब होकर तितर-बितर नहीं हो जाता, जैसा कि उष्णकटिबन्ध के

इलाकों में होता है, ठण्डे इलाकों में यह नहीं होता। यह नहीं कह रहा हूँ कि बिलकुल नहीं होता, आम तौर से होता है लेकिन कुछ-न-कुछ तो मिल जाता है। तो निएंडरथल गुफा से जो कई हड्डियों के अवशेष मिले, उसमें से चन्द हड्डियों में से इतना डीएनए निकला कि निएंडरथल डीएनए का अनुक्रम पढ़ पाए। चूँकि वह अनुक्रम हमारे पास है इसलिए हम जान गए कि भैया, तुम जब यूरोप पहुँचे न, मतलब तुम्हारी पर-पर-पर-पर-पर-पर-पर-पर नानी जब पहुँचीं न, तो उन्हें एक निएंडरथल बॉयफ्रेंड मिला था। यह एक-दो बार की बात नहीं है क्योंकि अगर यह एक-आध बार हुआ होता तो निएंडरथल डीएनए हमारे डीएनए में आज इतनी मात्रा में मौजूद न होता। यह कई बार हुआ होगा। सम्भावना है कि यह आम बात है।

अच्छा आप कहो कि एक ही बार तो हुआ, बाकी तो हम शुद्ध हैं न? ना! कैसे? तो यह यूरोप की ओर गई पर-पर-पर-पर-पर-पर-पर-पर नानी की कहानी है। उनका एक भाई था जिसने कहा, “मैनु यूरोप में नी जाणा, मैं इधर जा रिया हूँ मध्य एशिया की ओर। वहाँ से पूर्व एशिया तक चला जाऊँगा।” और वहाँ 5 लाख साल पहले अफ्रीका से निकली हुई प्रजाति के वंशज मिले, जिन्हें हम आज डेनीसोवन कहते हैं, होमो



चित्र-4: इज़राइल में मिले निएंडरथल के जीवाश्म।

डेनीसोवेंसिस। डेनीसोवन और निएंडरथल क्यों कहते हैं? क्योंकि निएंडरथल के जो हड्डियों के अवशेष मिले, वो निएंडरथल में मिले यानी कि निएंडर गुफा में मिले। वैसे ही डेनीसोवन इसलिए कहते हैं कि डेनिसोवा की गुफा में मिले, रशिया में। फिर वही बात! नए लोग मिले हैं, अलग दिखते हैं तो आकर्षण तो अलगाव का होता ही है, तो इस वजह से डेनीसोवन डीएनए हममें मौजूद है। हममें से कइयों में थोड़ी मात्रा में मौजूद है। जो इंडोनेशिया, फिलीपींस, पापुआ न्यू गिनी की ओर रहते हैं, ऐसे लोगों में डेनिसोवन डीएनए कभी-कभार तो 10 फीसदी तक मौजूद होता है। उसी तरीके से हम में आधे-एक फीसदी से चार-पाँच फीसदी तक मौजूद है। काफी है और हम सब में है।

अब मैं आपसे सवाल करता हूँ, आप मुझे बताइएगा कि मनुष्य जाति के किस हिस्से में न निएंडरथल डीएनए है, न डेनिसोवन डीएनए है? सबसे 'शुद्ध' मनुष्य कौन हैं? कहाँ के हैं?

उत्तर - अफ्रीका के हैं।

अफ्रीका के हैं। जो हमारे चचेरे-मौसेरे भाई-बहनें, हमारे साथ अफ्रीका से निकले ही नहीं, वहीं पर रहे, तो यह योग नहीं आया। बिलकुल, बिलकुल शुद्ध हैं वे। तो अगर कोई कहना चाहता है कि हम अपनी विरासत की वजह से किसी भी तरीके से शुद्ध हैं, तो सिर्फ मूर्खता नहीं है, भूल भी है। सिर्फ यही नहीं, हमारे पास जो डेनिसोवन या निएंडरथल डीएनए बतौर विरासत आया है, उससे हमें कई फायदे हुए हैं। हमारे कई जनक, हमारे कई जींस, जो बहुत काम आते हैं - प्रतिरक्षा प्रणाली के लिए, प्रतिकार शक्ति के लिए जो कई जींस ज़रूरी हैं, उनमें से चन्द सारे हम अपनी निएंडरथल विरासत से लिए हुए हैं। हमारे जो भाई-बहनें द्वीपों में रहते हैं, एशियाई-पूर्व-एशियाई द्वीपों में, उन्होंने इसी तरीके से कई जींस अपनी डेनिसोवन विरासत से लिए हैं। तो यह जो वैविध्य है, यह हमारे काम आया हुआ है। हम इस वैविध्य को सिर्फ सहन नहीं करते, वह हमारे लिए बड़ी अहमियत रखता है।

मनुष्यों का फैलाव और खेती

अभी तक जो बात की है, इस सोच से की है कि हम मनुष्य इस जंगल में रहते थे, हमारे बच्चे जंगल के उस भाग में रहने को गए। क्यों गए? वहाँ कोई रहता नहीं था, सोचा यहाँ थोड़ी भीड़ हो रही है। 'थोड़ी भीड़ हो रही है' का मतलब क्या है? दिन में जो औसतन दो ही लोग दिखा करते थे, आजकल दिन में 5 लोग दिखाई देते हैं यार, बड़ी भीड़ हो गई। तो यह सोचकर हम जंगल के किसी अन्य हिस्से में चले गए, और यूँ हम फैले। इसका मतलब यह

है कि हम जहाँ गए वहाँ, एकाध निएंडरथल या डेनीसोवन की बात छोड़ दीजिएगा, आम तौर पर पहले कोई नहीं था। कोई प्रदेश पर हक नहीं जता रहा था। लेकिन जैसे हम फैलते गए, एक अन्य प्रक्रिया सामने आने लगी। वह क्या है? कि हम अब ऐसे प्रदेश में भी घुसने लगे जहाँ पहले से लोग मौजूद हैं। हम में से किसी को इसमें आश्चर्य नहीं होता। हम इन्सानियत को अच्छी तरह पहचानते हैं। अलग दृष्टि से सवाल पूछें तो, 60 हज़ार साल पहले जो लोग यहाँ आए, सिर्फ उन्हीं लोगों के हम वंशज हैं या बीच में और कोई घुसकर भी आया था? यह जो तुलनात्मक शोध है, इसके ज़रिए थोड़ा-बहुत इस सवाल का भी उत्तर मिलने लगता है। वो कैसे? यदि 60 हज़ार साल पहले हम यहाँ पहुँचे, तो हम इसी तरीके की एक वर्गीकरण की स्कीम बना सकते हैं जिसमें यह तय हो कि अगर सिर्फ 60 हज़ार साल पहले का डीएनए होता तो कैसा दिखता। और अगर उसके सिवाय कुछ दिख रहा है, तो हो सकता है कि वह बाहर से आया हो। बाहर से अगर आया हो तो बाहरी डीएनए जो है, यूरोप में है, चीन में है, अफ्रीका में है, पूर्वी एशिया में है, द्वीप एशिया में है, उनका डीएनए लेकर हम अनुमान लगा सकते हैं कि कितने हज़ार साल पहले कोई अन्य, फिर लौटकर दक्षिणी एशिया में आया और उनकी वांशिक विरासत कितनी रही हम में। तो यह जब देखने लगे, तो यूँ लगने लगता है कि अण्डमान निकोबार के जो पुराने लोग हैं... 'आदिवासी' कहने में मुझे थोड़ी हिचकिचाहट होती है, लेकिन चलो ओरिजनल पीपल कहें आदिवासी को... उनके पूर्वज शायद वे लोग हैं जो 60 हज़ार साल पहले यहाँ मौजूद थे। हम में और उनमें वह वांशिक विरासत साझा है। लेकिन हम में और उनमें बड़े फर्क हैं। ये फर्क बड़े वांशिक फर्क हैं, अनुवांशिक फर्क हैं, जेनेटिक फर्क हैं, वह कैसे? वह यूँ कि पश्चिमी एशिया से 10-15 हज़ार साल पहले और लोग आए। अच्छा, ये जो लोग आए, इसका प्रागैतिहासिक इतिहास में कोई सबूत मिलता है? क्या पुरातत्व शास्त्र में, जीवाश्म शास्त्र में इसका कोई सबूत है कि 10-15 हज़ार साल पहले ये लोग आए? तो 'है'। वह कैसे? हम जानते हैं कि 10-15 हज़ार साल पहले अनेक जगहों में खेती का उद्गम हुआ। इससे पहले हम हंटर-गेदरर थे, हम शिकार करते थे और हम जंगल में चीज़ें इकट्ठी करते थे और खा-पीकर गुज़ारा करते थे। पहली बार, तकरीबन 10-15 हज़ार साल पहले, अनेक जगहों में अलग-अलग तरीकों से हम खेती करने लगे, और जैसे-जैसे हम खेती करने लगे, हम नगर बसाने लगे। क्योंकि अगर खेती करो तो धान मिले, अगर धान मिले तो

इतना धान मिले कि सिर्फ अपने लिए धान मिला, ऐसा न हो, बल्कि ज़्यादा मिले। ज़्यादा धान का हम क्या करें? व्यापार करें। और बाज़ार के लिए लोगों का इकट्ठा होना बिलकुल ज़रूरी है। तो हम शहर बनाने लगे, नगर बनाने लगे, हम ग्राम बनाने लगे। और जैसे-जैसे यह करने लगे वैसे-वैसे, जिसे अर्थशास्त्री सरप्लस वैल्यू यानी कि अधिशेष मूल्य कहते हैं, उसका निर्माण होने लगा। और सरप्लस वैल्यू का जैसे निर्माण हो तो उसे अपनाने के लिए काफी तरीके हमने अपनाए हैं। तो धीरे-धीरे खेती करने वाले लोग और खेती की आदत, खेती की संस्कृति, दोनों फैलने लगे। और हमारे डीएनए में सबूत है कि 10-15 हज़ार साल पहले शायद खेती के साथ, खेती की संस्कृति के साथ, जो लोग पश्चिमी एशिया से दक्षिणी एशिया में आए, उन्होंने भी हमारे डीएनए में अपने निशान छोड़े।

...जारी

सत्यजित रथ: राष्ट्रीय प्रतिरक्षाविज्ञान संस्थान में तीन दशक तक शोध करने के बाद अब इंडियन इंस्टिट्यूट ऑफ साइंस एजुकेशन एंड रिसर्च, पुणे में पढ़ाते हैं। पुणे से एम.बी.बी.एस., मुम्बई से एम.डी. (पैथोलॉजी) के बाद हैफ्किन इंस्टिट्यूट, ब्रौनडाइस युनिवर्सिटी व येल युनिवर्सिटी स्कूल ऑफ मेडिसिन में पोस्ट-डॉक्टोरल शोध किया। चार दशकों से प्रतिरक्षा तंत्र पर शोध के साथ-साथ विज्ञान शिक्षण व लेखन और स्वास्थ्य व चिकित्सा से जुड़े सामाजिक व आर्थिक मुद्दों में रुचि।

